स्कूल की भाषा बनाम बच्चे की भाषा
बच्चों से सीखना

महेश झरबड़े

यह लेख एक बहुभाषी समाज के बच्चों और उनकी शिक्षा, ख़ासकर भाषा शिक्षा पर केन्द्रित है। लेखक अपनी कक्षा के उदाहरण प्रस्तुत करते हैं और बताते हैं कि बच्चों की भाषा को स्कूल और कक्षा में जगह देने में शिक्षक की क्या भूमिका होती है। एक अन्य उदाहरण सुझाता है कि भाषाओं को जगह देना भाषा और संस्कृति के रिश्ते को सहजने में मदद करता है व साथ ही किसी संस्कृति के अच्छे विचारों को फैलाने में भी मददगार हो सकता है। वे बताते हैं कि इन प्रयासों का शिक्षक के बच्चों से साथ रिश्ते और विश्वास के साथ ही बच्चों के आत्मविश्वास पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

लेख इस ओर भी इशारा करता है कि बच्चों से नई भाषा सीखने के अनुभव से यह समझ भी बनती है कि बच्चों को नई भाषा सिखाने की प्रक्रिया में किन बातों का ध्यान रखने की ज़रूरत है। सं.

मुस्कान संस्थान का जिन बस्ती समुदायों के साथ काम है उनमें मुख्य रूप से गोण्ड, पारधी, नट, मराठी, मुस्लिम बंजारा और अगरिया भाषाओं को जानने-समझने वाले लोग शामिल हैं। इस आधार पर यदि मैं कहूँ कि हमारे पास बहुभाषिता का एक बड़ा भण्डार है तो यह अतिशयोक्ति नहीं होगी। इन समुदायों से जुड़े कुछ बच्चे बहुसंख्या में तो कुछ अल्पसंख्या में मुस्कान के 'जीवन शिक्षा पहल' स्कूल में पढ़ने आते हैं और चूँकि मुस्कान में सभी बच्चों को अपनी भाषा में अपनी बात रखने और करने की स्वतंत्रता है इसलिए अलग-अलग समय पर अलग-अलग भाषाओं के शब्द और वाक्य कानों में पड़ते रहते हैं। इस तरह अनजाने में ही नई भाषाओं के साथ रूबरू होने के मौक़े मुझे मिलते रहते हैं। मैंने बच्चों और युवाओं के साथ काम के दौरान कई बार ये महसूस किया कि चर्चा या बातचीत के दौरान उनकी भाषा के मात्र एक शब्द का इस्तेमाल भी बच्चे और मेरे बीच विश्वास के सेतु का काम करता है।

कभी-कभी कक्षा से बाहर कोई बच्चा घूमता दिखता है तो मैं उसे रोककर पूछ लेता हूँ, मैं बागमुगालियां जा रहा हूँ? को तुम्हारी भाषा में कैसे बोलेंगे? वो मेरी तरफ़ देखता है, मुस्कुराता है और पूछता है हमारी भाषा में? फिर कहता है, 'नन्ना बाग़मुगालियां डयतना।' मैं रुक-रुक

चित्र : शिवेन्द्र पांडिया

कर वाक्य दोहराता हूँ। ग़लत उच्चारण होने पर वो मुझे करेक्ट करता है और दौड़कर कक्षा में चला जाता है। वहाँ वो अपने दोस्तों को बताता है। कुछ समय बाद खनक और पार्वती आकर पूछते हैं, हमारी भाषा में कैसे बोलेंगे, मैं बागमुगालियां जा रहा हूँ। मैं दोहराता हूँ, 'नन्ना बाग़मुगालियां डयतना।' वो एक दूसरे की तरफ़ देखते हैं और कहते हैं, भैया, आपको हमारी भाषा आने लगी। मैं एक लाइन बोलता हूँ और बच्चों का आत्मविश्वास कहता है मुझे सबकुछ आ गया। मैं पूछता हूँ, क्या मुझे ये लाइन लिखकर दे सकते हो? वो हाँ में सर हिलाकर चली जाती हैं। लंच टाइम पर करण, पार्वती और खनक मुझे ढूँढ़ते हुए आते हैं और मेरे हाथ में एक काग़ज़ पकड़ाकर कहते हैं, पढ़के बताओ; मैं वापिस दोहराता हूँ 'नन्ना बाग़मुगालियां डयतना।' वो ख़ुश हो जाते हैं और पूछते हैं, आपको एक और लाइन लिखकर दें क्या? मेरी हाँ उनको एक अलग स्तर के आत्मविश्वास से भर देती है। इसके बाद मुझे उनसे एक नया वाक्य मिलने लगता है।

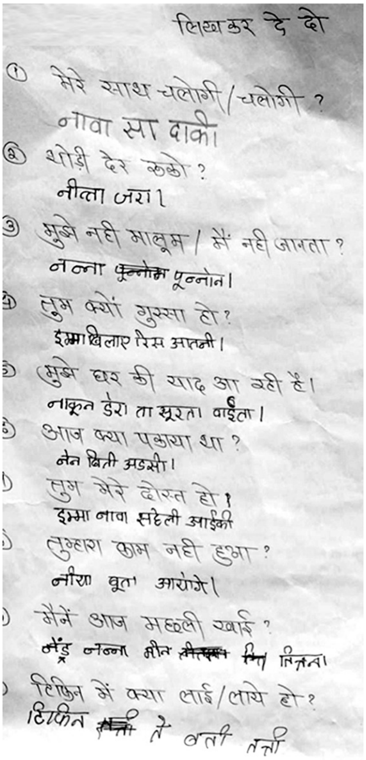

अब हम जब भी मिलते हैं वे मुझे गोण्डी भाषा की एक लाइन बोलना सिखाते हैं। मैं एक लाइन सीखकर ख़ुश होता हूँ और वो एक लाइन सिखाकर बेहद ख़ुश। हमको एक दूसरे से जोड़ने में उनकी अपनी भाषा का सबसे अहम रोल है। और साथ ही ये अहसास, कि हम किसी बड़े को कुछ सिखा रहे हैं, उन्हें आत्मविश्वास और आत्मसम्मान से भर देता है।

आमतौर पर समाज के बड़े लोगों और शिक्षकों की ये ज़िम्मेदारी मानी जाती है कि वे बच्चों को सिखाएँ; पर बच्चे भी बहुत कुछ सिखा सकते हैं ये मान पाना सबके लिए कहाँ आसान है। बच्चों से उनके अन्दाज़ में सीखने का एक अलग ही आनन्द है। *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005* के अनुसार, "भाषा एक ऐसा संसाधन है जो बच्चे विद्यालय में लाते हैं और जो विचार, संवाद और समझने में मदद करता है।"[1] कक्षा-कक्ष प्रक्रिया में घर पर बोली जाने वाली भाषा का प्रयोग बच्चे के आत्मसम्मान और आत्मविश्वास के लिए अति आवश्यक है।[2] बच्चों से बात करते हुए मैंने इस तथ्य को बहुत नज़दीक से महसूस किया।

बच्चों से उनकी भाषा सीखने की इस प्रक्रिया में मुझे थोड़ा वक़्त ज़रूर लगा; पर सीखने के दौरान मुझे कभी भी डर नहीं लगा जो आमतौर पर बच्चे स्कूल में महसूस करते हैं। एक दिन खनक और पार्वती ने कहा कि हम आपको रोज़ सिखा रहे हैं न, कल जो-जो आपको याद है वो लिखकर ले आना और जो सीखना है वो भी लिखकर लाना। मैंने अपना होमवर्क किया। मुझे यक़ीन नहीं हो रहा था कि मैंने ऐसे ही बातों-बातों में काफ़ी वाक्य ठीक से बोलना सीख लिए थे।

इसका एक फ़ायदा यह हुआ कि दूसरे बच्चे भी मुझे उनकी भाषा सिखाने लगे। और मैंने सबके सामने शर्त रख दी कि जब भी

1. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005*, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के बच्चों की समस्याएँ
2. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005*, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के बच्चों की समस्याएँ

हम मिलेंगे तुम लोग मुझसे अपनी भाषा में ही बात करना; चाहे मुझे समझ आए या न आए। आजकल जब भी मैं बच्चों के बीच होता हूँ नई भाषा के कुछ-न-कुछ नए शब्द दोहराता रहता हूँ। कोई पूछता है, 'उट्लो खई लीदों?' (खाना खा लिया?), कोई कहता है, 'तुमि कई आले?' (आप कब आए) और कोई बताता है, 'मिये रातानु मर्गानु लुखानु खादू' (हमने रात को मुर्ग़ की सब्ज़ी खाई)।

यह बच्चों के साथ हमारा बहुत छोटा मंच है, पर यहाँ एक साथ दो-तीन और कभी-कभी चार-पाँच भाषाएँ बतियाती हैं, अपनी पहचान बनाती हैं, एक दूसरे को समझती हैं, सम्मान पाती हैं और बच्चों के बीच भाषाई सौहार्द्र बढ़ाती हैं।

मैं कुछ वाक्य बोल पाता हूँ और कुछ नहीं। कुछ भाषाओं के शब्दों का ठीक उच्चारण नहीं कर पाता तो बच्चे प्रैक्टिस कराते हैं; कहते हैं सरल तो है बोलो, आ जाएगा। यह भी समझ आता है कि हर भाषा के उच्चारण का अपना अन्दाज़ है। कभी-कभी मैं शब्द सही पढ़ता हूँ पर शब्दों का उच्चारण एकदम सही नहीं होता। नई भाषाओं को सीखते हुए मुझे यह भी स्पष्ट रूप से समझ आ रहा है कि पढ़ने के साथ-साथ सही उच्चारण भी महत्त्वपूर्ण है।

भाषा सीखने में क्या-क्या मुश्किलें होती हैं ये समझना हो तो बच्चों की भाषा सीखना ही चाहिए। अकसर ये कहा-सुना जाता है कि बच्चे सीखते नहीं हैं। अमुक बच्चा बहुत स्लो लर्नर है, ये बच्चे ठीक से उच्चारण ही नहीं कर पाते, इत्यादि। बच्चों की भाषा सीखते हुए मुझे इन सब सवालों के उत्तर आसानी से मिलने लगे हैं और ये भी समझ आ रहा है कि बच्चों को दूसरी भाषा या नई भाषा सिखाते समय किन बातों का ख़्याल रखा जाना चाहिए। कितने धैर्य की ज़रूरत है। कई शैक्षिक नीति दस्तावेज़ों ने इसकी तरफ़ ध्यान दिलाया है, "स्कूल का सबसे पहला दायित्व बनता है घर की भाषा से स्कूल की भाषा को जोड़ना। उसके बाद एक या उससे अधिक भाषाओं को जोड़ दिया जाए ताकि बच्चा पहली भाषा छोड़े बिना अन्य भाषा में आसानी से पहुँच सके।[3]

भाषा से जुड़े कुछ वाक़ये, कुछ सवाल

वाक़या 1 : बागमुगालियां बस्ती का सोहेल और राजीव नगर का दिलबरस बहुत अच्छे दोस्त हैं। एक की भाषा गोण्डी है और दूसरे की पारधी। सोहेल ने बताया कि हमारी दोस्ती मूंदीखेड़ी कैम्प में हुई थी। मैंने अपने दोस्तों से बात करते हुए 'माड़साल' बोला तो दिलबरस बोला, 'माड़साल' नहीं, 'माड़सा' होता है। मैंने बोला कि भाई तू चुप रह, मेरी भाषा मैं जानता हूँ। उसने कहा कि 'माड़सा' तो मेरी भाषा में भी बोलते हैं। हमने पहले थोड़ी चिक-चिक की, फिर बात की, तो पता चला गोण्डी के 'माड़साल' और पारधी के 'माड़सा' का एक ही मतलब है। फिर मैंने कहा कि दिलबरस, तू मेरे लिए 'माड़साल' नहीं है और उसने कहा, तू भी 'माड़सा' नहीं है और हम दोनों दोस्त बन गए। (गोण्डी के 'माड़साल' और पारधी के 'माड़सा' शब्द का अर्थ है ऐसा बाहरी इंसान जो उनकी जाति का नहीं है। जब कोई नया इंसान उनके समुदाय में जाता है तो उसे इस नाम से बुलाया और पहचाना जाता है। इनकी बस्तियों में लोगों को कहते सुना जा सकता है कि ये माड़सा या माड़साल कौन है?)

3. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005*, भारतीय भाषाओं का शिक्षण, पेज 14

दो अलग समुदायों को आपस में जोड़ने में भाषा क्या भूमिका अदा कर सकती है, यह इस उदाहरण में बख़ूबी झलकता है। इन शब्दों पर थोड़ा गहराई से सोचें तो एक और बात जो समझ आती है वो यह कि बहुत-से समुदायों में बाहरी व्यक्ति को उसके रंग, काम, जाति या धर्म के आधार पर पहचाना जाता है लेकिन इस समुदाय में बाहरी लोगों के लिए जाति, वर्ग से परे एक ख़ास शब्द है; यह आदिवासी संस्कृति की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता को भी बताता है। सेंट ऑगस्टाइन ने बहुत पहले कहा था, "भाषा हमारे लिए दुनिया को रोशन करती है। इसमें हम जोड़ सकते हैं कि हर भाषा अपने तरीक़े से दुनिया को रोशन करती है।"[4] यहाँ यह बात भी बिलकुल वाज़िब लगती है, "एक भाषा को खोने का मतलब है इससे सम्बन्धित पूरी-की-पूरी साहित्यिक और सांस्कृतिक परम्परा का नष्ट होना या संसार को जानने के एक विशेष तरीक़े का नुक़सान।"[5]

वाक़या 2 : मैंने स्कूल के नोटिस बोर्ड पर अलग-अलग समुदाय के बच्चों से पूछकर 'ये हमारा स्कूल है', वाक्य को गोण्डी, मराठी, कोरकू, पारधी, भीली, नट और बंजारी भाषा में लिखा और नोटिस बोर्ड पर चस्पा कर दिया। जब लंच का समय हुआ तो ज़्यादातर बच्चे इन वाक्यों को देख रुककर पढ़ रहे थे और ख़ुश हो रहे थे। भरत बोला कि हमारे गाँव की भाषा में तो लिखा ही नहीं है। सब अपनी-अपनी भाषा में पढ़कर ख़ुश हो रहे हैं, हमारी भाषा में भी लिख दो न!

एक युवा लड़की ने फ़ोटो खींचकर व्हाट्सएप स्टेटस पर लगाया। उसकी दोस्त ने देखा और मुझे फ़ोन करके बोली कि भैया, आपने 'ये मोर स्कूल हाय' ग़लत लिखा है; उसको 'ये हमर स्कूल हाय' कर दो। दसवीं कक्षा के बच्चे ने आकर पूछा कि 'स्कूल' को सब भाषाओं में स्कूल ही क्यों बोलते हैं? गोण्डी में 'इदू मावा स्कूल आंद', पारधी में 'ये म्हारो स्कूल जे', बंजारी में 'ये मारो स्कूल छे'। सब भाषाओं में स्कूल ही है। फिर कुछ सोचकर बोला, ओह! समझ आ गया ये तो अँग्रेज़ी का शब्द है, लेकिन हमारी भाषा में स्कूल के लिए कोई शब्द ही नहीं है, ऐसा क्यों है ये तो सोचना पड़ेगा? यदि एक साथ इतनी भाषाओं में वह एक ही वाक्य नहीं पढ़ता तो 'हमारी भाषा में स्कूल के लिए कोई शब्द क्यों नहीं है', जैसा गम्भीर सवाल सम्भवतः उसके ज़ेहन में नहीं आता। ये बहुभाषा की ही तो ख़ूबसूरती है जिसने उसके ज़ेहन में अपनी भाषा के लिए एक बड़ा सवाल खड़ा किया।

वाक़या 3 : सितम्बर महीने में मैं बागमुगालियां बस्ती के बच्चों को 'बस्ती का चोर' कहानी सुना रहा था। इस दौरान 13 वर्षीय जवान बीच-बीच में अपनी भाषा में कुछ-कुछ बोलता जा रहा था जिससे अन्य बच्चों का ध्यान भटक रहा था। मैंने उससे कहा कि जवान, मैं इस कहानी की दो लाइन हिन्दी में सुनाता हूँ और तुम अपनी भाषा गोण्डी में सबको बोलकर बताना, ऐसा करें? और वह मान गया। उसका इतनी जल्दी मान जाना मुझे हज़म ही नहीं हुआ; पर ये सच था। कहानी के बाद बिजली ने कहा कि भैया, जवान ने हमारी भाषा में सुनाया तो ज़्यादा समझ आया और मज़ा भी आया।

इस बात ने जवान को ख़ुश किया और मुझे सोचने के लिए मज़बूर कि मैं अपने लिए आसान भाषा, हिन्दी, में कहानी सुनाकर या कोई बात बताकर ये मान लेता हूँ कि गोण्डी बोलने वाली बच्ची 'वो' समझ जाएगी। क्या ये मानना सही है? जब मैं ज़्यादातर बातों / परिस्थितियों को अपनी कम्फ़र्टेबल भाषा में समझता हूँ तो किसी और की कम्फ़र्टेबल भाषा में कहे बिना उससे समझ जाने की उम्मीद करना कितना मुनासिब है? इस वाक़ये ने *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005* के अन्तर्गत 'पाठ्यचर्या

4. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005*, शिक्षा के लक्ष्य

5. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005*, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के बच्चों की समस्याएँ

बदलाव के लिए व्यवस्थागत सुधार' में कही गई एक बात को एकदम जीवन्त कर दिया, "जहाँ बच्चे के घर की भाषा और स्कूल की भाषा में फ़र्क़ होता है वहाँ समझाना वास्तव में एक बड़ा मसला होता है।"[6] *पाठशाला भीतर और बाहर* के आलेख 'भाषा शिक्षण और भाषाई खेल' में कुसुमलताजी अपने अनुभव साझा करती हुए लिखती हैं, "भय रहित माहौल में बच्चे जल्दी और अधिक सीखते हैं एवं अपनी बात निःसंकोच अध्यापक के समक्ष रखते हैं। सीखने की प्रक्रिया में बच्चों से दोस्ती करना बहुत सहायक होता है।"[7] मैं इसमें सिर्फ़ इतना जोड़ना चाहता हूँ कि भय रहित माहौल, निःसंकोच अपनी बात रखना और बच्चों से दोस्ती का एक महत्त्वपूर्ण आधार कक्षा में बहुभाषिता का उपयोग हो सकता है।

क्या कहता है हमारा संविधान

बच्चों की शिक्षा में उनकी भाषा का अहम रोल है, इस बात की पुष्टि हमारा संविधान भी करता है। जहाँ संविधान प्रत्येक नागरिक को अपनी भाषा में राज्य को सम्बोधित करने का अधिकार प्रदान करता है, वहीं धारा 350-अ (सातवाँ संशोधन अधिनियम 1956) में प्राथमिक स्तर की शिक्षा के लिए भाषिक अल्पसंख्यक समुदाय के बच्चों को उनकी मातृभाषा में पठन-पाठन की बात की गई है।[8] *1968 की शिक्षा नीति* के अनुसार, "स्कूल में जो भाषा पढ़ाई जाए वह मातृभाषा हो या क्षेत्रीय भाषा; मातृभाषा से आशय बच्चे की वह भाषा जो उसके घर बोली जाती है जिसके साथ वह अपने दोस्तों के बीच संवाद स्थापित करता है।" शिक्षा के क्षेत्र में हुए कई अध्ययन भी इस बात की पुष्टि करते हैं कि कक्षा में बहुभाषिता बच्चों व शिक्षकों के बीच रिश्तों को और मज़बूत करती है। यूनेस्को के *शैक्षणिक आधार पत्र* के अनुसार, "आरम्भिक शिक्षण के लिए मातृभाषा अत्यन्त आवश्यक है और इसे जहाँ तक बरक़रार रखा जा सके, रखा जाना चाहिए।[9]

अन्त में यही कहना चाहता हूँ कि भाषा सिर्फ़ सम्प्रेषण का माध्यम भर नहीं है, यह इससे आगे भी बहुत कुछ है। न सिर्फ़ शिक्षा में बल्कि समाज के हर क्षेत्र में बहुभाषिता बहुत ही महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। बहुभाषा ज्ञान कई स्तरों पर सामाजिक सम्बन्धों को मज़बूत करता है। सम्प्रेषण का माध्यम कही जाने वाली यही भाषा कहीं सामाजिक सत्ता का प्रतीक है तो कहीं भाषा के कारण ही लोग तिरस्कार भी झेल रहे होते हैं। सभी भाषाओं का विकास लोगों के व्यवहार में न सिर्फ़ लचीलापन लाएगा, बल्कि सामाजिक सहिष्णुता को भी जन्म देगा। हमें यह मानना ही होगा कि जिस तरह जीवन के लिए जैव विविधता आवश्यक है, ठीक उसी तरह सामाजिक सद्भाव, समता, न्याय व सफल जनतंत्र के लिए भाषाई विविधता भी ज़रूरी है। "भारत जैसे देश में सामाजिक सौहार्द्र तभी सम्भव है जब हम एक दूसरे की भाषा और संस्कृति को सम्मान दें।[10]

---

6. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005*, पाठ्यचर्या बदलाव के लिए व्यवस्थागत सुधार
7. *पाठशाला भीतर और बाहर*, अंक 7, भाषा शिक्षण और भाषाई खेल
8. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005*, भारतीय भाषाओं का शिक्षण
9. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005*, भारतीय भाषाओं का शिक्षण
10. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005*, भारतीय भाषाओं का शिक्षण, पेज 22

महेश झरबड़े पिछले 15 सालों से बच्चों व युवाओं के साथ शिक्षा सम्बन्धी कामों से जुड़े रहे हैं। एकलव्य के शिक्षा प्रोत्साहन केन्द्र और मुस्कान के जीवन शिक्षा पहल स्कूल में बच्चों व युवाओं के विभिन्न मुद्दों को शिक्षा के साथ जोड़कर देखने का प्रयास किया है। आदिवासी और वंचित तबक़ों के लिए किस तरह की शिक्षा हो, ये समझने का प्रयास जारी है। आपने सिनर्जी संस्थान, हरदा के साथ जुड़कर इस मुद्दे को गहराई से समझने की कोशिश भी की है। बच्चों, युवाओं व ग्रामीण विकास के मुद्दों पर पढ़ने और लिखने में रुचि है।

सम्पर्क : mjharbade@gmail.com